IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

तुलसीदास की लोकमंगल की भावना

विनोद कुमार

कला स्नातकोत्तर (हिंदी),शिक्षा स्नातकोत्तर,

राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (हिंदी)

प्रस्तावना–

तुलसीदास जी हिंदी के ऐसे कवि हैए जिन्होंने काव्य रचना का मूल उद्देश्य लोकमंगल का विधान स्वीकार किया है। मंगल शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता हैं–शुभए कल्याणए सौभाग्यए कल्याणप्रद प्रसन्ताए आनंद इत्यादि। तुलसीदास जी ने ऐसी दो कृतियां भी लिखी है जिनमें मंगल शब्द प्रयुक्त हुआ है–पार्वती मंगल व जानकी मंगल। परंतु यहां पर मंगल शब्द का अर्थ है विवाह क्योंकि यहां पर मंगल शब्द नारी के साथ जुड़ा हुआ है। परंतु जब मंगल को लोक के साथ जोड़ दिया जाता है तो वहां कल्याण या आनंद या उल्लास अर्थ प्रधान करता है। लोकमंगल का अर्थ है लोककल्याण। तुलसीदास जी कहते हैं –

कीरति भनिति भूति भल सोई।

सुरसरि सम सब कह हित होई।।

अर्थात् कीर्तिए कविता और ऐश्वर्य वही अच्छा होता है जो गंगा के समान सबका हित करने वाला हो। जो कविता लोकमंगल का विधान नहीं करते जिसे पढ़ने के बाद मन में सद्वृत्तीया जागृत नहीं होती वह भला किस काम कीए तुलसीदास जी ने यहां यही व्यंजना की है। इस शोध के द्वारा तुलसीदास जी की लोकमंगल की भावना को दर्शाने की कोशिश की गई है।

मुख्य शब्द–तुलसीदासए लोकमंगलए भावनाए

(1) राम राज्य की स्थापना– तुलसीदास जी ने श्मानसश में जहां एक और कलयुग का वर्णन करते हुए उस युग का जीता–जागता रूप प्रस्तुत किया है वहीं उन्होंने दूसरी और मुगल काल की सामाजिक परिस्थितियों का खुलकर चित्रण किया। उस समय मुगलों के अत्याचार से हिंदुओं की धर्म–कर्मए वर्ण आश्रम व्यवस्था समाप्त हो गई थी। मानव नारी के सौंदर्य में रत होकर अपने कर्तव्य को भूल चुका था

तथा कामए क्रोधए लोभएमोह में पडकर कुपथ का सेवन करें रहा था। कलयुग मे धर्म के स्थान पर पाप होने लगे थे। शुभ कर्म समाप्त हो गए थे और दुष्कर्मो की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। तुलसीदास जी ने जहां एक और इस प्रकार की सामाजिक अव्यवस्था व मर्यादाहीनता को देखकर गहन दुख व्यक्त किया है तो वहीं दूसरी ओर श्रामचरितमानसश के श्उत्तरकांडश में रामराज्य की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए इस ओर संकेत किया था कि यदि इस प्रकार का रामराज्य हो तो समाज सुखी और शांतिमय हो जाता है। रामराज्य में सभी प्रजा अपने-अपने वर्ण के अनुसार कार्य करती है तथा अपने-अपने धर्म का पालन आश्रमों के अनुसार करती हैं। वेद के अनुसार यदि सभी अपने कर्तव्य मार्ग पर लगे हुए हो तो उन्हें सुख की प्राप्ति होती हैए किसी प्रकार का दुख नहीं होता तथा सदाचरण करने से वे निरोगी रहते हैं। इसे समाज में प्रीति बढ़ती है। तुलसीदास जी मानव कल्याण की भावना से कहते हैं कि यदि रामराज्य के समान राज्य हो तो वह किसी प्रकार का भी कष्ट नहीं रहता -

दैहिक दैविक भौतिक तापा।

राम राज्य नहीं काहुहि व्यापा।।

(2) शालीनतापूर्ण प्रवृत्ति- तुलसीदास जी के युग में अत्याचारी शासक थेए जो तलवार के बल पर प्रजा का शोषण करते थे। राज्य के अधिकारी व कर्मचारी भी मनमाना व्यवहार करते थे जिससे कोई व्यवस्था या नियम नहीं रह गए थे। तुलसीदास जी इस प्रकार की राज्याव्यवस्था व राजा की कर्तव्यहीनता से अत्यंत व्याकुल थे। चार वर्ण चार आश्रम का आचरण नहीं हैए न ही धर्म है। सभी नर-नारी शास्त्रों के विरुद्ध चल रहे हैं। शास्त्रों की आज्ञा का पालन करने वाला कोई नहीं है। तुलसीदास जी इस प्रकार की अव्यवस्था का दोष प्रमुख रूप से राजा को देते हैं। तुलसीदास जी ने राम को आदर्श राजा माना था जिसने शालीनता के साथ राज्य करते हुए लोक कल्याण की भावना को महत्व दिया था। राम प्रजा के प्रति स्नेह रखते थे। उनके लिए प्रजा का सुख अपने सुख की अपेक्षा बड़ा था। प्रजा में कोई किसी से बैर नहीं रखता था। राम ऐसे राजा थे जिन्होंने अपने यशए शक्ति व शील के आधार पर प्रजा के पारस्परिक द्वेष को भी मिटा दिया था। प्रजा शोक रहित निर्भय और निरोग रहती थी।

(3)आदर्शवाद की स्थिति- तुलसीदास जी लोककल्याण के लिए आदर्शवाद को महत्व देते थे। तुलसीदास जी के युग में राजा और प्रजा दोनों ने ही अपनी आदर्श भावना को खो दिया था। मानव कामवासनाए क्रोध और लोभ के वशीभूत होकर कार्य कर रहा था। उसे अच्छे बुरे का ध्यान नहीं था। नारी अपने पतिव्रता धर्म को छोड़कर और अपने सुंदर पति का परित्याग कर पर पुरुष का सेवन करती थी। तुलसीदास जी प्रजा के इस घृणित व्यवहार से अत्यंत दुखी थे। इसी कारण उन्होंने आदर्शवादी भारतीय प्राचीन परंपरा को सर्वश्रेष्ठ माना था। आदर्श व्यक्ति ही आदर्श परिवार का निर्माण कर सकता है। आदर्श परिवार ही आदर्श समाज को बना सकता है और आदर्श समाज ही आदर्श राष्ट्र का निर्माण कर सकता

है। राम स्वयं आदर्शवादी थेए उन्होंने अपने परिवार में आदर्श भावना का संचार किया था। भाई-भाईए पिता-पुत्रए पति-पत्नीए स्वामी-सेवक के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया था। तुलसीदास जी ने श्रामचरितमानसश में जिस आदर्श समाज की ओर संकेत किया है वहां प्रजा में परस्पर प्रेम हैए सहानुभूति हैए सहयोग है और परोपकार की सच्ची भावना है।

(4) मर्यादापूर्ण जीवन- तुलसीदास जी लोकमंगल के लिए मर्यादा पूर्ण जीवन को महत्व देते थे। उन्होंने अपने युग में देखा था कि राजा-प्रजाए नर-नारीए वृद्ध और युवा सभी सामाजिकए धार्मिक और नैतिक मर्यादा खो चुके हैं। न तो वर्ण व्यवस्था है और न ही आश्रम रीति। जो बलवान और धनवान है वही निर्धन और निर्बल को दुखी कर रहा है। प्रजा अपनी आजीविका के लिए अपने धर्म को छोड़कर अधर्म का सेवन कर रही हैं। तुलसीदास जी ने श्रामचरितमानसश में राम का इतना मर्यादापूर्ण जीवन प्रस्तुत किया है जो परिवारए समाज और राज्य के लिए अनुकरणीय हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि सभी को राम बनना चाहिए। तुलसीदास जी कामए क्रोधए लोभए मोह और मद को मानव का घोर शत्रु कहते थे परंतु इनके मर्यादित रूप को अनिवार्य भी मानते थे। इन दोषो की अतिशयता तथा मर्यादाहीनता अवश्य कष्टदायक है। श्मानसश में रावण वह शूर्पणखा में कामवासना की मर्यादाहीनता दिखाई पड़ती है जिसका उन्हें दंड भी भोगना पड़ा। नारद को अपने ब्रह्मचर्यव्रत का अहंकार था परंतु उसने काम का सर्वथा परित्याग किया था। राम में काम का मर्यादित रूप है इसलिए उन्हें कोई विपत्ति व कठिनाई अपने मार्ग में ही नहीं देखनी पड़ी। परशुराम ने अपने मद को अतिशय रूप में प्रस्तुत किया परंतु बाद में वह शांत हो गए। राम को अपनी वीरता पर गर्व है परंतु उनके गर्व की सीमा है। वह समुद्र के प्रति क्रोध करते हैंए परंतु पहले प्रार्थना करते हैं। तुलसीदास जी ने राम के क्रोध को मर्यादा में ही बांधे रखा है। राम और भरत आदर्श भाई हैं। दोनों को ही राज्य के प्रति आसक्ति नहीं। अपनी-अपनी मर्यादा में बंधे हैं। राम अपनी माताओं के साथ, दास-दासियों के साथए मंत्रियों व गुरुओं के साथ सदा अपनी मर्यादा में रहकर बात करते हैं। राम को कैकई के कहने पर पिता उन्हें वनवास दे देते हैं तो राम शांत भाव से पिता की आज्ञा का पालन करते हैं। न तो उन्हें अपने पिता के प्रति क्रोध है और ना ही अपनी माता कैकई के प्रति विक्षोभ है।

(5) संतों का महत्व- तुलसीदास जी ने श्मानसश में बार-बार इस बात पर प्रकाश डाला है कि संतों के वचन मान्य हैं। उनका मार्ग ही प्रशस्त है। संतों की संगति से दुष्ट भी उसी प्रकार सुधर जाता है जिस प्रकार पारसमणि के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है। संतो की प्रशंसा करते हुए यहां तक कहा गया की सज्जनों के मिलने के समान और कोई सुख नहीं है। तुलसीदास जी ने संतों की प्रशंसा करके दुर्जनों की अप्रशंसा करके लोककल्याण का संदेश दिया है। समाज की मर्यादा व आदर्श का आधार संत है तथा मर्यादा और नियमों का उल्लंघन करने वाला दुर्जन है। तुलसीदास जी ने दुर्जनों का युग देखा था। वे समाज को संतो से निर्मल करना चाहते थे।

(6) समन्वय की भावना– तुलसीदास जी समन्वयवादी थे। वे समाज की एकता व कल्याण के लिए विभिन्न धर्मोए मतोंए अनेक मान्यताओं व रीति–रिवाजों में समन्वय की स्थापना करने के इच्छुक थे। समाज की दशा बहुत विषैली थी। राजा और प्रजा में एकता नहीं थी। प्रजा का शोषण करते हुए राजा ऐशो–आराम की जिंदगी व्यतीत करता था। तुलसीदास जी सच्चे लोकनायक थेए जिन्होंने समाज के विघटन को रोककर एक सूत्र में पिरोया था। इस विषय में डॉक्टर हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है–श्भारत का लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सकेए क्योंकि भारतीय समाज में नाना प्रकार की परस्पर विरोधीनी सांस्कृतिकए साधनाएंए विचार और धर्म सिद्धांत प्रचलित थे। बुद्धदेव समन्वयकारी थे। गीता में समन्वय की चेष्टा की गई हैश। तुलसीदास जी भी समन्यवादी कवि थे। उन्होंने अपने युग में राजनीतिकए पारिवारिकए सामाजिकए आर्थिक नैतिकए व धार्मिक क्षेत्रों में समन्वय किया था। वे लोक दृष्टा और लोक–कल्याण कर्ता थे। ज्ञान और भक्ति के क्षेत्र में जो अंतर था उन्होंने उसे मिटाया था। ज्ञान और भक्ति ये दो मार्ग होते हुए भी दोनों का उद्देश्य एक ही है। तुलसीदास जी के समय हिंदू धर्म में दो प्रकार की उपासना थी। एक भगवान के निर्गुण रूप को मानती थी जो भगवान घट–घट में रहते हैं परंतु उन्हें न तो देखा जा सकता है और न ही उनके स्वरूप को कहा जा सकता है। दूसरी ओर भगवान के सगुण रूप की उपासना की जाती थी जिसका आकार हैए रूप हैए रंग हैए वह सब कुछ करता है और वही रक्षक है।

(7) सच्चे समाजवाद की कल्पना– तुलसीदास जी के युग में विश्रृंखलता थी। तब समाज–आदर्श रहितए मर्यादाहीनए पथभ्रष्ट तथा हीनभावनाओ से ग्रस्त था। नारी एकमात्र भोग विलास का साधन थी। मुस्लिम साम्राज्य में हिंदुओं पर अनेक प्रकार से अत्याचार किए जाते थे। समाज में केवल नारी वर्ग ही दुखी नहीं थाए बल्कि सभी किसी न किसी पीड़ा से पीड़ित थे। आर्थिक शोषण होने के कारण सभी दुखी थे। तुलसीदास जी ने अपने युग की दुर्दशा का चित्रण श्कवितावलीश में भी किया है और श्रामचरितमानसश में भी किया। वह इस दशा को सुधारने वह लोककल्याण के लिए भी प्रयत्नशील थे। श्मानसश में वे एक और राम की भक्ति को सच्चे हृदय से प्रस्तुत करते हैं तो दूसरी और रामराज्य की स्थापना करके समाज में ऐसा परिवर्तन चाहते हैं जहां सभी सुखी रहे। राम क्षत्रिय वंश में उत्पन्न शक्तिए शील और सुंदरता के प्रतीक थेए परंतु वे वानरों और रीछो को गले लगाते हैं। भीलनी के जूठे बेर खाते हैं। निषादराज को ममत्व प्रदान करते हैं। जटायु का श्राद्ध करते हैं। उन्होंने समाज में छोटे–बड़ेए धनी–निर्धनए ऊंच–नीचए जाति–पाती और छुआछूत के भेद को नहीं समझा था। सभी मे वे मानवता के दर्शन करते हैं। शत्रु रावण के भाई विभीषण को भी अपनत्व प्रदान करते हैंए उसे अपना मित्र मानते हैं तथा लंका राज्य जीतकर उसे वहां का राज्य प्रदान कर देते हैं। तुलसीदास जी के राम ने समाज को ऐसा उपदेश भी दिया था जो लोक कल्याणकारी था।

निष्कर्ष- निष्कर्ष तौर पर कह सकते हैं कि तुलसीदास जी हिंदी के ऐसे कवि हैं जिन्होंने काव्य रचना का मूल उद्देश्य श्लोकमंगलश का विधान स्वीकार किया है। श्मंगलश शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है- शुभए कल्याणए सौभाग्यए कल्याणप्रदए प्रसन्ताए आनंद इत्यादि। तुलसीदास जी ने दो ऐसी कृतियां भी लिखी है जिनमें श्मंगलश शब्द प्रयुक्त हुआ है-पार्वती मंगल व जानकी मंगल।

संदर्भ-

(1द्धहिंदी साहित्य का इतिहास-कला स्नातकोत्तर (हिंदी)

(2द्धप्राचीन एवं मध्यकालीन हिंदी कविता-कला स्नातकोत्तर (हिंदी)

(3द्धसाहित्य प्रतियोगिता सीरीज- राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (हिंदी)